आज़ाद भारत और वैज्ञानिक सोच पर मौजूदा हमला

गौहर रज़ा[i]

विज्ञान और आध्यात्म सवालों के ज़रिए यथार्थ को समझने के दो अलग अलग तरीक़े हैं। दोनों में जानने की प्रक्रिया की शुरुआत सवालों से होती है। लेकिन इन दोनों के सवालों की प्रकृति में फ़र्क़ होता है। आध्यात्म के सवाल 'क्यों' से शुरू होते हैं, और विज्ञान के सवाल 'कैसे' से शुरू होते हैं। उदाहरण के तौर पर आध्यात्म में सवाल पूछा जाएगा कि 'पृथ्वी क्यों घूमती है?' लेकिन विज्ञान सवाल उठाएगा कि 'पृथ्वी कैसे घूमती है?' यानी आध्यात्म के ज़रिए हम अपने ज्ञान की सीमा तक पहुँचते ही पृथ्वी के घूमने को भगवान की मर्ज़ी मान लेंगे। लेकिन विज्ञान में 'कैसे' का सवाल लगातार चलता रहेगा। जैसे बिग बैंग कैसे हुआ यह आज के वैज्ञानिकों को नहीं मालूम, लेकिन इसका जवाब 'भगवान की मर्ज़ी' नहीं हो सकता, हाँ हम ये कह सकते हैं वैज्ञानिकों को इसके बारे में आज नहीं मालूम, लेकिन शोध जारी है, तो शायद कल मालूम हो जाए। और ये सही जवाब होगा, विज्ञान में 'मुझे नहीं मालूम' भी सही जवाब है।

इन सवालों के बीच फ़र्क़ है, और उसी की वजह से अन्य फ़र्क़ भी पैदा होते हैं। जैसे विज्ञान का सच चिरस्थायी सच नहीं हो सकता। कई महान वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों ने विज्ञान की पारभाषित करने की कोशिश की है। कार्ल पॉपर का कहना है कि कोई दावा एक वैज्ञानिक दावा तभी तक हो सकता है, जब तक उसको झूठा/ग़लत साबित करने की संभावना है। यानी विज्ञान के मौजूदा सच को चुनौती दी जा सकती है। अगर चुनौती नहीं दी जा सकती तो वो दावा वैज्ञानिक दावा है ही नहीं। थॉमस कुहन ने आगे चल कर कहा कि विज्ञान निरंतर प्रगति करता रहता है और फिर कोई वैज्ञानिक अपने वक्त तक उपलब्ध सारी संभावनाओं के संयोग से विज्ञान में एक बड़ा बदलाव ले आता है, जिससे विज्ञान के लिए बिलकुल नयी राहें खुल जाती हैं और पुरानी चीज़ें ग़लत साबित हो जाती हैं।

उदाहरण के लिए, न्यूटन ने कहा कि सारा ब्राह्मण गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत पर व्यवस्थित है, और फिर इतने बड़े वैज्ञानिक के दावे को आइंस्टाइन ने चुनौती दी, गुरुत्वाकर्षण बल है ही नहीं। आइंस्टाइन के रिलेटिविटी के सिद्धांतों ने विज्ञान में इनक़िलाब पैदा कर दिया, शोध की नई राहें खोल दीं। एक आम उदाहरण लें तो कल तक वैज्ञानिक कह रहे थे कि DDT रसायन इंसानियत की सारी परेशानियों का हल है, और फिर कहने लगे कि DDT से कैंसर होता है और अब DDT को दुनियाभर में प्रतिबंधित किया जा चुका है। लेकिन ये सभी बातें विज्ञान से ही पता चलीं। यही सुंदरता है विज्ञान की, कि आप बड़े से बड़े वैज्ञानिक सिद्धांत को चुनौती दे सकते हैं। वहीं दूसरी तरफ़, आप किसी धार्मिक ग्रंथ में लिखी हुई किसी बात को ग़लत नहीं कह सकते, या उसके ग़लत होने का दावा नहीं कर सकते। आध्यात्म और धर्म में ऐसा मुमकिन नहीं है।

मतलब बहुत सरल है। जब कोई विज्ञान में अपने किसी पूर्वज को चुनौती देता है, तो उन्हें बहिष्कृत

नहीं किया जाता। उनके घर नहीं जलाए जाते, उनके ख़िलाफ़ फ़तवे नहीं सुनाए जाते, बल्कि हम जश्न मनाते हैं।

हिन्दोस्तान एक ऐसा समाज है जहां इंसान ऐतिहासिक रूप से जाति और लिंग के पदानुक्रमों में बंटे रहे हैं। महिलाओं को 'ताड़न की अधिकारी' बताया गया है। लेकिन इस समाज में इंसानी बराबरी की बुनियाद पर रचा गया संविधान पारित हो जाता है। ऐसा नहीं है कि संविधान पर दस्तख़त करने वाले संविधान सभा के सभी सदस्य इंसानी बराबारी के सिद्धांत में यक़ीन रखते थे। ये उस वक्त के राजनीतिक नेतृत्व के प्रयासों की वजह से मुमकिन हो पाया था।

इसकी एक वजह हमें स्पष्ट होनी चाहिए। यह कि उस वक्त के नेतृत्व के चारों तरफ सिर्फ़ हिन्दोस्तान ही नहीं, अपितु पुरी दुनिया की सबसे बेहतरीन काबिलियतों वाले शख़्स मौजूद थे (आज भी हैं)। ये शख़्सियतें सिर्फ विज्ञान में ही नहीं, बल्कि साहित्य, संगीत, लेखन, दर्शन, और इतिहास इतिहास जैसी विधाओं में भी पारंगत थीं। अद्भुत बात ये है कि इस तरह के लोगों के बीच में गांधी और नेहरू जैसे लोगों के व्यक्तित्व का विकास हो रहा था। इन शख़्सियतों के राजनीतिक लीडरशिप से सीधे संबंध थे। इसीलिए नेहरू अपने कारावास (1942-45) के दौरान 'भारत की खोज' जैसी किताब लिख पाते हैं। यह कमोबेश इतिहास की एक किताब है, लेकिन इसमें कोई दस पन्नों में नेहरू ने एक सदी की वैज्ञानिक बहस का संक्षिप्त वर्णन कर वैज्ञानिक सोच के बारे लिखा है। बावजूद इसके कि नेहरू राजनीतिज्ञ थे, वैज्ञानिक नहीं। ये दस पन्ने आज़ाद हिन्दोस्तान के संदर्भ में बहुत अहम हो जाते हैं।

आज़ादी के बाद हमारा मुल्क दुनिया का पहला ऐसा मुल्क बनता है जिसकी संसद 1958 में वैज्ञानिक नीति प्रस्ताव (SPR) पेश करती है। प्रधानमंत्री नेहरू पार्लिमेंट में उठ कर खड़े होते हैं, और कहते हैं कि इस प्रस्ताव का हर एक शब्द हमारे मुल्क के भविष्य के लिए जरूरी है, और इसलिए मैं यह पूरा प्रस्ताव पढ़ूँगा। और वो पूरा प्रस्ताव पढ़ते हैं। जबकि परम्परागत रूप से जब कोई प्रस्ताव पेश किया जाता है तो उसे टेबल कर दिया जाता है और उस पर बहस होती है, कोई उसे पढ़ कर नहीं सुनता। बहस में आम तौर पर विरोधी पक्ष खड़ा होकर किसी शब्द, या अनुच्छेद पर आपत्ति जताता है और उसे हटाने अथवा संशोधित करने की माँग करता है। लेकिन SPR एक अकेला ऐसा प्रस्ताव है, जिसपर विरोधी पक्ष ने ये कहा कि आप इस प्रस्ताव को पहले क्यों नहीं लेकर आए। उस वक्त के नेतृत्व के बीच एक आम सहमति थी कि प्रगति करने के लिए वैज्ञानिक नीति और वैज्ञानिक चेतना जरूरी है।

जब देश का प्रधानमंत्री खड़ा होकर कहता है कि वैज्ञानिक चेतना और वैज्ञानिक नीति इस मुल्क के लिए, और इसके भविष्य के लिए जरूरी है तो नीचे तक एक कारगर संदेश पहुँचता है। इसके परिणामस्वरूप पूरे तंत्र और वैज्ञानिक समुदाय में ऊर्जा का नवसंचार होता है। हम CSIR, IIT, ISRO, DRDO आदि जैसे संस्थानों का निर्माण शुरू करते हैं। वैज्ञानिक तरक्की हेतु प्रतिबद्ध एक बुनियादी संरचना तैयार होती है। जबकि यह याद रखना भी आवश्यक है कि उस वक्त हमारा मुल्क न सिर्फ़ गरीब, बल्कि लहुलहान भी था। जब ये प्रस्ताव हमने पास किए थे, तब हमने अपनी कमर कस ली थी। क्यों? क्योंकि तत्कालीन राजनैतिक नेतृत्व यह समझा रहा था कि यह क्यों जरूरी है।

पैट बैग्ली: विज्ञान विरोधी, 5 फरवरी, 2015; साभार: politicalcartoons.com

अब आप वहाँ से 2014 में आ जाइए। वर्तमान राजनैतिक नेतृत्व कहाँ से आया है? उसकी सोच का विकास कहाँ और किनके बीच में हुआ है? उसकी परवरिश कहाँ हुई है? आप पाएँगे कि वर्तमान राजनैतिक नेतृत्व का हर नेता सत्तर और अस्सी के दशक में उभरे बाबाओं के पैर छूकर यहाँ पहुँचा है। इन बाबाओं में एक आचार्य बालकृष्णा हैं, जिनकी संपत्ति 2.2 बिलियन डॉलर है। बाबा रामदेव की कुल सम्पत्ति 210 मिलियन डॉलर जबकि माता अमृता की कुल सम्पत्ति 250 मिलियन डॉलर है। शीर्ष के दस बाबाओं में निम्नतम सम्पत्ति–धारी बाबा की सम्पत्ति भी दो मिलियन डॉलर है।

चन्द्रयान का बजट इससे थोड़ा ही ज़्यादा था। आप समझ सकते हैं कि समाज आज अपना पैसा कहाँ लगा रहा है, किस दिशा में अग्रसर है। इस माहौल में ऐसा ही होगा कि एक बाबा खड़ा हो कर कहेगा कि आधुनिक चिकित्सा बकवास है, हमें जड़ी–बूटियों की तरफ जाना चाहिए। ये अलग बात है कि उनको अपने इस तरह के बयानों पर माफ़ी माँगनी पड़ती है, लेकिन अब से बीस तीस साल पहले क्या कोई ये कहने की हिम्मत कर सकता था। एक तरफ़ राजनैतिक नेतृत्व है, और दूसरी तरफ मिथकों और अंधविश्वासों के कारखानों की तरह काम करने वाले बाबा गण हैं। जब हम और आप जैसे लोग इस मुल्क की तामीर में लगे हुए थे, तब ये बाबा अंधविश्वास पैदा कर रहे थे और उन्हें नए–नए लिफ़ाफ़ों में लोगों को पेश कर रहे थे। आज ये कारखाने बेहद मज़बूत हो चुके हैं। राजनैतिक नेतृत्व, इन बाबाओं और सहचर पूंजी (क्रोनी कैपिटल) का एक गठजोड़ तैयार हो गया है। यह गठजोड़ एक–दूसरे के हितों को साधने के लिए इन तीनों के बीच एक समझौते को निरूपित करता है।

आज हम देखते हैं कि प्रधानमंत्री कहते हैं गणेश प्राचीन काल में प्लास्टिक सर्जरी के होने का प्रमाण हैं। दुनिया का सबसे बड़े लोकतांत्रिक देश होने का दावा करने वाले देश के प्रधानमंत्री का इस तरह का बयान देना न सिर्फ देश को बदनाम करने के समान है, बल्कि नीचे तक यह संदेश देने के समान है

कि अब आप कोई भी कहानी सुनाकर विज्ञान की मनगढ़ंत परिभाषा तैयार कर सकते हैं। यह प्रधानमंत्री के हुक्म की तामील करने के लिए तैयार खड़े देश के हज़ारों उत्कृष्ट वैज्ञानिकों और गणितज्ञों को यह संदेश देना है कि अब यही होगा। ऐसे बयान इंगित करते हैं कि वैज्ञानिक चेतना को काल–कोठरी में बंद किया जा सकता है। यही कारण है कि एक मुख्यमंत्री कहता है कि महाभारत–काल में अणु बम मौजुद था और एक न्यायाधीश कहता है कि मोर आँसुओं से प्रजननन करते हैं।

वैज्ञानिक चेतना में ह्रास का ही परिणाम है कि राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) डारविन के सिद्धांत और आवर्त सारणी (Periodic Table) को पाठ्य सूची से बाहर निकाल देती है। डारविन के सिद्धांत के प्रति बहुत सारे देशों ने यही रुख अपना रखा है। आवर्त सारणी को स्कूली पाठ्यक्रम से निकालना इसलिए जरूरी है ताकि बाबाओं के लिए यह बताना संभव को पाए कि हर चीज मात्र पाँच तत्वों से मिलकर बनी है। यह कितनी शर्मनाक बात है कि 2006 के बाद से पाकिस्तान ने अपनी पाठ्यसूची में डार्विनवाद को अपनाया है, और हमने पिछले साल उसे हटा दिया। जबकि हमने वो चार्टर साइन किया हुआ है जिसमें लिखा है कि “स्कूली शिक्षा में डार्विनवाद को अपनाया जाना और अक्षुण्ण रखा जाना चाहिए।“

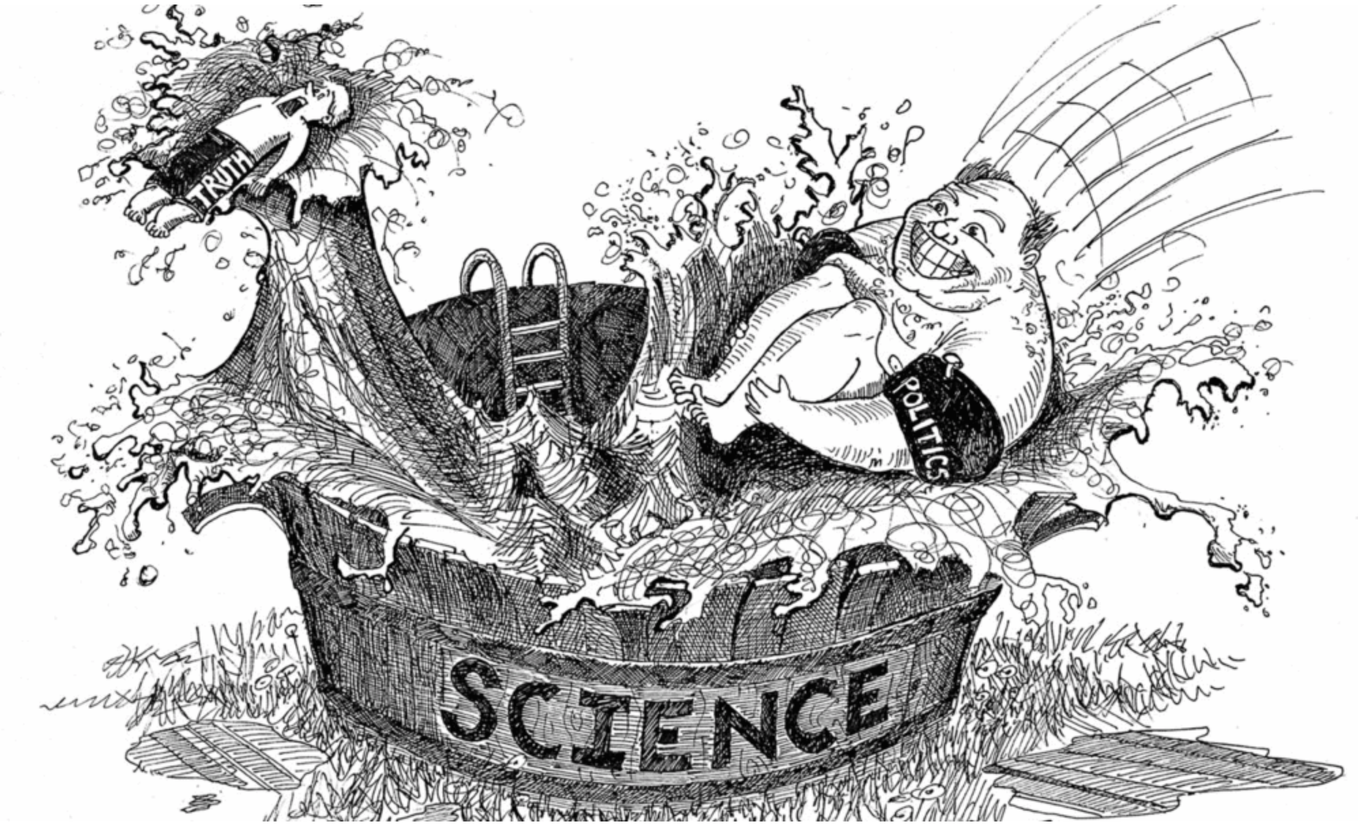

साभार:
https://blog.ucsusa.org/astrid-caldas/dont-let-them-fool-you-disinformation-is-not-an-accident

आज विज्ञान की सीधी मुखालफ़त कर पाना बेहद मुश्किल है। पूरी दुनिया में विज्ञान का प्रभुत्व स्थापित हो चुका है। इसी कारण विज्ञान–विरोधी अप्रत्यक्ष हमले कर रहे हैं। आईआईटी को आवंटित धन में कटौती करके, संजीवनी बूटी पर शोधकार्य हेतु धन आवंटित करके तथा पाठ्यक्रम के जरूरी हिस्से हटाकर आदि माध्यमों से विज्ञान के खिलाफ़ अप्रत्यक्ष हमले किए जा रहे हैं। लेकिन

इस माहौल में यह बहुत ज़रूरी है कि हम वैज्ञानिक चेतना की लगातार बात करते रहें। वैज्ञानिक चेतना की रक्षा इसी में निहित है। जब हमने 1949 में यह फ़ैसला लिया कि हमारे मुल्क के विकास का आधार विज्ञान होगा, तो उसके नतीजे हमको लगभग चालीस साल बाद दिखने शुरू हुए। विज्ञान पर हो रहे मौजूदा दौर के हमलों का असर भी हमें बाद ही में दिखेगा।

i कवि, भौतिक विज्ञानी और विज्ञान कार्यकर्ता